ग्रामीण विकास की प्रवृत्तियां एवं सामाजिक परिवर्तन

योजना, जनवरी 2015

श्याम सुन्दर प्रसाद

ग्रामीण समाजशास्त्र के अंतर्गत सामाजिक वैज्ञानिकों ने ग्रामीण कल्याण और सामाजिक पुनर्निर्माण हेतु गरीबी, बेरोजगारी, शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक अव्यवस्था को उजागर किया हैं। सरकार ने भी इन क्षेत्रों में विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों के माध्यम से आजादी से अब तक प्रयास करती आ रही है। इससे उतरोत्तर ग्रामीणों की स्थिति में सुधार देखे जा रहे है। जो अंततः सामाजिक परिवर्तन के रूप में परिलक्षित हुए है। हालांकि इनमें समस्याएं और चुनौतियां हैं लेकिन सम्भाव्य व अपार संभावनाएं भी दिखाई दे रही हैं

भारत की कुल आबादी एक अरब 25 करोड़ है, जो विश्व की 17.5 प्रतिशत आबादी के बराबर है। उनमें से ग्रामीण क्षेत्रों में 65 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। वर्तमान में कुल 6.38 लाख गांव है। कहा भी जाता है कि "भारत गांवों का देश है"। अर्थात् गांवों की तरक्की किए बिना, भारत की उन्नति नहीं हो सकती है। विकास के कई पहलू है। यह अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग धारणाएं प्रस्तुत करती हैं। यह मनुष्य की सभी आकांक्षाओं और इच्छाओं से जुड़ी होती है। जो उनके सर्वांगीण विकास के लिए अतिआवश्यक है। विकास इनको प्राप्त करने के उपाय बताती है। विकास से प्रगति दिखती है जो लोगों के जीवन पर वास्तविक प्रभाव डालती है। 20वीं शताब्दी में ग्रामीण सामाजिक संरचना में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए है। भारत की जीडीपी की वृद्धि दहाई अंक को छू रही है तथा यह विश्व की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बन रही है। पूरे विश्व का इससे अपेक्षाएं भी बनी हुई है। लेकिन इसका फायदा आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को कितना मिल रहा है? इण्डिया और भारत की संकल्पना में कितनी दूरी कम हो रही है? यह प्रश्न देश के विकास की अवधारणा को स्पष्ट करेगा।

ग्रामीण आबादी के पास थोड़ा ही सही लेकिन हर क्षेत्र में पहुंच जरूर बनी हुई है। 1990 के दशक के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बदलाव आने लगा। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास, सामाजिक परिवर्तन का सबसे अहम साधन बना हुआ है। ग्रामीण विकास से तात्पर्य मूल रूप से तीन प्रमुख मुद्दों से है - (1) शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली तथा आवास जैसी सभी मूलभूत सुविधाओं को विकसित करना (2) व्याप्त गरीबी को दूर करने हेतु रोजगार का समुचित अवसर पैदा करना तथा (3) देश के शासन/गवर्नेन्स में ग्रामीणों की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु उनमें जागरुकता और चेतना का संचार करना। इस प्रकार की व्यवस्था से ही गांव के लोगों का सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक विकास होना संभव है।

सरकार विभिन्न योजनाओं और फ्लैगशिप कार्यक्रमों के माध्यम से गाँवों में बुनियादी सुविधाओं और आधारभूत संरचनाओं के निर्माण द्वारा ग्रामीण भारत की तस्वीर बदलने के लिए ग्रामीण समाज के उपेक्षित और दलित वर्गों के विकास के लिए विशेष अवसर उपलब्ध करा रही है। गरीबों, महिलाओं, कमजोर और निर्बल वर्गों से संबंधित कई प्रमुख कल्याणकारी और विकासोन्मुखी योजनाओं को लाई गई है। ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों जैसी मूलभूत सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए 'पूरा' अर्थात् *'प्रोवाइडिंग अर्बन एमिनीटिज इन रूरल एरियाज'* को लाया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य ग्रामीण क्षेत्रों एवं शहरी क्षेत्रों में व्याप्त विषमताओं को कम करना तथा संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास प्राप्त करना है। इनमें तत्कालिक कदम मनरेगा, भारत निर्माण एवं खाद्य सुरक्षा हो सकते है। इनमें मनरेगा ने ग्रामीणों के लिए विभिन्न प्रकार से सामाजिक परिवर्तन में सहायक बना है। नयी सरकार द्वारा अभी हाल में चलाई गई 'प्रधानमंत्री जन-धन योजना' ने लोगों को

लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के श्याम लाल कॉलेज (प्रातः) में राजनीतिक विज्ञान विभाग के असिस्टेंट प्रोफेसर हैं। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय तथा अन्य संस्थानों में भी अतिथि अध्यापक के तौर पर अध्यापन में संलग्न हैं। "मनरेगा क्रियान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका" विषय पर दिल्ली विश्वविद्यालय में डॉक्टरल शोध कर रहे हैं। ईमेल: shyamzrd@gmial.com

बैंक में खाता खोलवा कर 'बचत' करने की परम्परा विकसित करने की नींव डाली है। बचत किसी भी समाज-परिवार के आर्थिक संतुलन को बनाए रखने में भूमिका निभाती है। इससे भविष्य में सहारा ही नहीं होगा बल्कि इन लोगों की जमा राशि का देश की विकास योजनाओं के कार्यान्वयन में बहुत बड़ा योगदान होगा।

'स्वच्छ भारत अभियान' ने भी लोगों को समानता के साथ अपने-अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का भान दिलाया है। इस प्रकार, तेजी से बदलते हुए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य में सबकी पहचान और गरिमा की स्थापना करना बहुआयामी सामाजिक परिवर्तन हेतु ग्रामीण समाज का पुनर्निर्माण करने के बराबर ही होगा क्योंकि आर्थिक विषमता एवं असंतुलित सम्प्रदायों के विकास गांवों में देखे जा सकते है। योजना आयोग द्वारा 19 मार्च, 2012 को जारी वर्ष 2009-10 के अखिल भारतीय निर्धनता अनुपात 29.8 प्रतिशत था। जबकि यह ग्रामीण क्षेत्रों में 33.8 प्रतिशत था। भारत में कुल निर्धनों की संख्या 35.47 करोड़ में से ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी संख्या 27.82 करोड़ है (अर्थात् लगभग 78.4 प्रतिशत)। (योजना आयोग, 2012)

ग्रामीण विकास की प्रवृत्तियों ने ग्रामीण सामाजिक दर्शन एवं संरचना में परिवर्तन लाई है लेकिन सामाजिक परिवर्तन अन्य कारणों से भी आ सकते है। जैसा कि एस. श्रीनिवासन कहते है कि "जब निचले वर्ग के लोग उच्च वर्ग के संस्कृति, भाषा, रहन-सहन और रीति-रिवाज इत्यादि का अनुसरण करते है तो समाज में सामाजिक परिवर्तन आते है"। (कर्ण 2003)

सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख तत्वों/आवश्यक पैमानों/मानकों की पहचान की जा सकती है जो निम्न है -

- शिक्षा का विकास
- राजनीति में युवा वर्ग की बढ़ती भूमिका
- सामाजिक मूल्य का स्तर
- आधारभूत सुविधाओं तक सबकी पहुँच
- आम लोगों की प्रवृत्ति में परिवर्तन
- प्राकृतिक संसाधनों का उपयुक्त प्रयोग
- नवीन तकनीकी और प्रौद्योगिकी का स्थानांतरण तथा
- समाजवाद की स्थापना की ओर बढ़ते कदम इत्यादि

ये सामाजिक संकेतक मानव के कल्याण की ओर संकेत कर रहे है। जो आर्थिक विकास के लिए सामाजिक प्रभावों की तस्वीर प्रस्तुत करता है। विकास, सामाजिक व्यय, गरीबी सूचकांक, मानवाधिकार और प्राकृतिक संसाधन इत्यादि से सामाजिक परिवर्तन की प्रवृति दिखाई देती है।

ग्रामीण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था का प्रभाव राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। ग्रामीण आबादी की बड़ी संख्या कृषि पर आधारित है। चूंकि यहां के किसान अशिक्षित हैं और कुछ खेती की बारीकियों से नासमझ भी हैं। इसके निदान के लिए सरकार ने कृषि-मित्र, किसान कॉल सेंटर एवं किसान क्रेडिट कार्ड जैसे कदम उठाए हैं लेकिन एक सर्वेक्षण से यह जाहिर हो रहा है कि ग्रामीण जनसंख्या का 30 प्रतिशत लोग खेती नहीं करना चाहते है। ग्रामीण निर्माण में सरकार के साथ-साथ सम्पन्न लोग भी अपने आय का कुछ हिस्सा गांवों की समृद्धि और विकास में खर्च कर रहे है। निम्न वर्ग के लोगों द्वारा ऐसे किए गए कार्यों से उन्हें समाज के द्वारा श्रेष्ठभाव मिलते है। अत: इससे गांवों की मानवीय विभेद व सामाजिक अखंडता टूट रही है।

ग्रामीण विकास की प्रवृत्तियों ने ग्रामीण सामाजिक दर्शन एवं संरचना में परिवर्तन लाई है लेकिन सामाजिक परिवर्तन अन्य कारणों से भी आ सकते है। जैसा कि एस. श्रीनिवासन कहते है कि "जब निचले वर्ग के लोग उच्च वर्ग के संस्कृति, भाषा, रहन-सहन और रीति-रिवाज इत्यादि का अनुसरण करते है तो समाज में सामाजिक परिवर्तन आते है"।

ग्रामीण विकास और सामाजिक परिवर्तन में पंचायती राज संस्थाओं ने सराहनीय योगदान दिया है। इसे एक तरह से क्रांतिकारी बदलाव कह सकते है। प्रथम, महिलाओं को मिले आरक्षण से पुरुषों के पुरुषवादी एवं शोषणकारी प्रवृतियों पर बहुद हद तक अंकुश लगा दिया है। पुरुष-महिला अंतरों मे कमी जरूर आई है। वे राजनीतिक भागीदारी के साथ अपना आर्थिक सशक्तीकरण भी कर रही है। वे समाज के सशक्त विकास से छूटे हुए बच्चों और महिलाओं के विकास को प्राथमिकता दे रही है। पंचायती राज संस्थाओं में नए-नए और छोटे-छोटे पदों पर चुने के प्रतिनिधियों की संख्या गांवों में लगातार बढ़ती जा रही है। उन्हें मिली ग्रामीण प्रतिष्ठा ने उनको अपने बच्चे-बच्चियों को उच्च शिक्षा के लिए शहरों में भेजने को प्रेरित किया है। आए दिन शहरों में मध्यम वर्ग के बच्चों की बढ़ती संख्या से देखा जा सकता है। निम्न वर्ग को भी इसके माध्यम से सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है। यह परिवर्तित समाज को दिखा रहा है।

विभिन्न तरह के विकास के बदलावों और प्रयासों से ग्रामीण परिवेश में परिवर्तन देखने को मिलता है। जो उन प्राचीन सामाजिक दर्शन/संरचना से काफी भिन्न है जिन विशेषताओं के चलते गांवों को याद किया जाता था या उससे उसकी पहचान थी। इस आर्थिक युग में ग्रामवासी के पास अब फालतू बातचीत या अनुत्पादक कार्यों के लिए समय का अभाव है। यह बढ़ती महंगाई का परिणाम हो सकता है। इसने ग्रामीण लोगों में शहरों की प्रवृत्ति ला दिया है। जिससे सामाजिक ताना-बाना एवं सामाजिक समरसता खत्म हो रही है। सामाजिक मूल्यों का ह्रास भी देखने को मिल रहे हैं। परिवार का स्वरूप भी बदलने लगा है। अब संयुक्त परिवार के ढ़ाचे से परिवर्तन होकर इसका आकार लघु से लघुतर हो रहा है। अर्थात् आर्थिक परिवर्तन ही सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन का कारण बना हुआ है। वैश्वीकरण के कारण भी परिवार के कार्य राज्य तथा अन्य सामाजिक संरचनाओं द्वारा किए जाने लगे है।

गांवों से शहरों की ओर पलायन की प्रवृत्ति हो रही है। पलायनवादी लोग शहरों से पैसे कमाकर गाँवों में अपने परिवार को उन्नत तरीके से रखना चाहते है। एक आदमी का शहरीकरण होने से एक नयी संस्कृति का जन्म होता है। गांवों में शिक्षा के विकास से तथा शहरों में शिक्षा ग्रहण करने के बाद और जागरुकता आने से अधिकांश गांववासी परम्परा और रूढ़िवादिता के चक्कर में फंसना नहीं चाहते है। लेकिन कुछ लोग अब भी इन्हें सामाजिक संतुलन कायम रखने का हथियार बनाए हुए है।

शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिसके बिना सामाजिक परिवर्तन की उम्मीद नहीं की जा सकती है। साधारण फार्मूला है - लोगों को शिक्षा मिलेगी। उसकी नौकरी होगी। नौकरी से विकास होगा। और विकास जब होगा तो

उसके एवं उसके परिवार के साथ ही समाज में भी परिवर्तन आएगा। गांवों में अब एक किलोमीटर के अंदर प्राथमिक एवं उच्च विद्यालय खुले हुए है। 'सर्व शिक्षा अभियान' के तहत सबको शिक्षा दी जा रही है लेकिन अनुबंध द्वारा शिक्षकों की नियुक्ति और 'मध्याह्न भोजन योजना' ने शिक्षा का स्तर गिरा दिया है। मध्याह्न भोजन योजना बच्चों को केवल भोजन देने के लिए शिक्षक और विद्यालय की पहचान बना दी है। इसे सही से लागू नहीं किया गया तो परिवर्तन का दौर बहुत पिछड़ जायेगा। गांवों में लड़कियों को शिक्षित करने की होड़ ने सामाजिक परिवर्तन को लाने का मुख्य कारण बनी है। महिला साक्षरता दर में वृद्धि हुई है लेकिन कहा जा सकता है कि इसमें केवल संख्या और मात्रा में ही वृद्धि हुई है। क्योंकि देखने में आया है कि साक्षर महिलाएं कुछ दिनों के बाद हस्ताक्षर करना भी भूल जाती है।

ग्रामीण विकास में विभिन्न स्वयंसेवी संगठनों जैसे खादी ग्रामोद्योग (रोजगार देने में), रेडक्रॉस सोसायटी (स्वास्थ्य), सुलभ इंटरनेशनल (शौचालय निर्माण एवं संचालन) इत्यादि ने सामाजिक न्याय दिलाने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक पहलुओं में प्रगति को बढ़ावा दे रही है।

गांवों में कानून तथा न्याय व्यवस्था भी बेहतर हो गई है। सरपंचों का कई न्यायिक अधिकार दिए जा रहे है। पुलिस स्टेशन पर अंकुश व निगरानी रखने के लिए जनता की एक टीम गठित की गई है। गांवों में सम्पन्नता भी दिखाई दे रही है। यदि गांवों के लोगों के जीवन स्तर को चार भागों धनी, बेहतर, औसत तथा गरीब में विभक्त करते है तो जो गरीब के जीवन स्तर का प्रतिशत पहले 40 प्रतिशत और औसत का 20 प्रतिशत था, अब गरीब का कम होकर औसत का 60 प्रतिशत हो गया है। ग्रामीणों के प्रति व्यक्ति आयों में वृद्धि हो रही है।

औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, परिवहन के साधनों में वृद्धि, अंग्रेजी शिक्षा की लोकप्रियता, राजनीतिक एवं सामाजिक जागरुकता, लोकतांत्रिक सरकार और छुआछूत को दूर करने वाले कानून इत्यादि ने जातिवाद के कुप्रभावों को कम कर दिया है। हर वर्ग द्वारा भेदभाव का दंश झेलने से ग्रामीण कमजोर वर्ग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गए है। इससे समाज में तेजी से परिवर्तन हो रहे है।

गांवों में विभिन्न तरह के धार्मिक विश्वास और संस्कृति का मिश्रण होता है जिसका उदाहरण मंदिर है लेकिन मंदिर अब भी जाति/वर्ण व्यवस्था से विमुख नहीं है। अब ग्रामीण विवाह भी अंतर्जातीय व्यवस्था पर आधारित हो चुका है। 'अनुलोम विवाह' (पुरुष उच्च जाति के और स्त्री निम्न जाति के) के साथ-साथ 'प्रतिलोम विवाह' (पुरुष निम्न जाति के और स्त्री उच्च जाति के) भी हो रहे है। वर्तमान में व्यक्ति के मूल्य जाति पर निर्भर न होकर ज्यादातर उसकी शिक्षा एवं उपलब्धि इत्यादि चीजों पर केंद्रित हो गया है। 'जजमानी व्यवस्था' ग्रामीण अर्थव्यवस्था और सामाजिक क्रम का मेरुदंड था। इस वंशानुगत एवं श्रेणीबद्ध व्यवस्था में 'जजमान' एवं 'कमीन' दो होते है लेकिन यह व्यवस्था धीरे-धीरे परिवर्तित हो रही है। इसका ह्रास होने का कारण शहरों की ओर पलायन, धर्म में विश्वास की कमी, पुरानी जातीय व्यवस्था से दूरी एवं वर्ग संघर्ष तथा कोई जाति विशेष का पेशा न रह जाना है।

गांवों में अनुमानित प्रतिव्यक्ति आय			
1993-94	1999-00	2004-05	2011-12
6364	11772	18127	45798
स्रोत: एनएसएसओ रोजगार रिपोर्ट			

सूचना के अधिकार, 2005 ने ग्रामीण प्रशासन में पारदर्शिता, जवाबदेयिता और शीघ्रता ला दी है। जिससे ग्रामीण जनता को विकास से जुड़े हुए सारे मुद्दे के समाधान करने और अपने सर्वांगीण विकास मे आने वाली बाधाओं को सरलता से खत्म करने में मदद मिली है। इसने ग्रामीणों में चेतना एवं जागरुकता को बढ़ा दिया है। हालांकि इसके प्रयोग बहुत कम हो रहे है। दूसरी तरफ कई सारी सूचनाएं सरकार को बिना मांगे देने की परम्परा भी विकसित करनी होगी।

ग्रामीण विकास के साथ अगर तेजी से सामाजिक परिवर्तन की संभावनाओं को प्रोत्साहन देना है तो निम्नलिखित कुछ महत्वपूर्ण आयामों को ध्यान में रखना अत्यावश्यक है:

- शिक्षा के व्यावसायिकरण को कम करते हुए इसमें अधिगम्यता एवं समानता के साथ गुणवत्ता भी लाई जाएं।
- शोध एवं विकास को गांवों से संबद्धता
- सरकारी नीतियों का सामाजिक परिवर्तनकारी लक्ष्य एवं सर्वोच्चता रखना
- विकास में सुधार की परिकल्पना
- नियोजित विकास शैली जो पिछड़े सामाजिक वर्गों (विकलांग/महिला/असन/अजजा) के विकास के मद्देनजर हो।
- सभी के प्रयास और एकजुटता
- मनुष्य के स्वार्थीपन स्वभाव में परिवर्तन

ग्रामीण सामाजिक परिवर्तन तेजी से न होने का कारण है कि ग्रामीण जनता को संख्या समझा जाता है लेकिन अगर उसको मानव संसाधन में परिणत कर दिया जाएं तो वह एक स्थायी परिसम्पत्ति बन सकता है। ऐसे होने पर ही समतामूलक समाज का निर्माण होगा और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन को भी समझा जायेगा या समझा जा सकता है। शिक्षित वर्ग गांवों की तरफ रुख नहीं कर रहे हैं। जिसके कारण इनके मूल्यों और व्यक्तित्वों के आदर्शों का लाभ ग्रामीणों को नहीं मिल पाता है। विकास और परिवर्तन के कम अंतर-संबंध के पीछे धार्मिक कट्टरता, नक्सलवाद, जातीय टकराव जैसी सामाजिक चुनौतियां भी है। अब भी यथार्थवादी लोगों द्वारा स्थिति में परिवर्तन न होने दिया जा रहा है। पूर्व से अब तक ग्रामीण विकास योजनाओं के मूल्यांकन किया जाए तो इनमें निवेशित खरबों की धनराशि और संसाधन के माध्यम से तीव्रगति से लोगों के अपेक्षित जीवन स्तर में बदलाव नहीं हो पाए हैं। विकास का मतलब सदा नये कार्यों में पहल तथा परिवर्तन का मतलब निरंतर और सकारात्मक होना चाहिए। अत: ग्रामीण जनता को योजनाओं एवं कार्यक्रमों के माध्यम से मानवीय विकास के पहलुओं, नीति-निर्माण एवं क्रियान्वयन कार्यों में सरलता, खुलापन, संवेदनशीलता एवं उतरदायित्व व प्रतिबद्धता का होना नितांत आवश्यक है। ❑

संदर्भ ग्रंथ:

एनएसएसओ रिपोर्ट्स: सांख्यिकी मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

कर्ण, एम.एन. (2003): *सोशल चेंज इन इण्डिया,* एनसीआरटी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 14

मैथ्यू, जॉर्ज (2003): *भारत में पंचायती राज : परिप्रेक्ष्य और अनुभव,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

यादव, सुबह सिंह (1991): *ग्रामीण विकास एवं अर्थव्यवस्था,* रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

योजना आयोग: भारत सरकार, नई दिल्ली

योजना: प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली

शर्मा, राजेन्द्र कुमार (1997): *रूरल सोसिओलॉजी,* अटलांटिक प्रकाशन, नई दिल्ली

शर्मा, विहारी सवालिया (2003): *ग्रामीण भारत के सर्वोन्मुखी विकास : एक परिदृश्य,* संजय प्रकाशन, नई दिल्ली